National Journal of Multidisciplinary Research and Development
www.newresearchjournal.com
ISSN: 2455-9040
Received: 06-01-2023, Accepted: 07-02-2023, Published: 24-02-2023
Volume 8, Issue 1, 2023, Page No. 55-58

रामायण महाकाव्य में संगीत कला

डॉ. शम्पा चौधरी
असोसिएट प्रोफेसर एवं प्रभारी, संगीत विभाग, वी. एम. एल. जी. कॉलेज, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
साहित्य जगत के साथ–साथ संगीत जगत में भी रामायण को विशेष स्थान प्राप्त है क्योकि पाठ्य होने के साथ–साथ यह छंदोबद्ध तथा गेय भी है। इसका प्रस्तुतिकरण पठन और गायन दोनो प्रकार से होने के कारण पूरे भारत में ही नहीं अपितु समस्त विश्व में यह अपना एक विशेष स्थान रखता है। यह महाकाव्य भक्ति, ज्ञान, राजनीति, आदर्शवाद का एक अनूठा उदाहरण है, जिसका प्रचार–प्रसार जन–जन तक हो चुका है। धनी–निर्धन, बाल–वृद्ध, शिक्षित–अशिक्षित सभी वर्गों के लोग इसे समझ सकते हैं और अपने जीवन की दिनचर्या में इसका अनुभव कर सकते हैं। जीवन के हर पहलू और हर संदर्भ में यह काव्य किसी न किसी रुप में प्रकाश डालता है। रामायण से हमें मर्यादा पुरुषोत्तम राम के आदर्श चरित्र को निकट से जानने का अवसर प्राप्त होता है।

मूल शब्दः संगीत, कला, संस्कृति, कविता, साहित्य, रामायण

शेध पत्र
संपूर्ण विश्व में भगवान राम की प्रसिद्धि इस बात से सिद्ध होती है कि अनादि काल से उनके नाम पर असंख्य मंदिरों का निर्माण हुआ। अनेकों काव्य, नाटकों का प्रणयन हुआ। अनेकों प्रबंध, ध्रुपद, भजन, कीर्तन इत्यादि बनाये गये। भारत ही नहीं अपितु सुमात्रा, जावा, बाली इत्यादि देशों में भी भगवान राम के मंदिर है तथा वहाँ के नृत्यों, नाटकों तथा गान आदि में आज भी भगवान राम एवं रामायण का प्रभाव परिलक्षित होता है। यही कारण है कि ब्रह्मा ने रामायण के विषय में जो भविष्यवाणी की थी वह अक्षरशः सत्य निकली–

''यावत स्थास्यन्ति गिरियः सरितश्च महीतले।
तावत्त रामायणकथा लोकेषु प्रचरिष्यति।।

अर्थात जब तक इस भूतल पर नदी और पर्वत रहेंगे। तब तक रामायण कथा का लोक में प्रचार होता रहेगा।, रामायण में लगभग २४००० श्लोक हैं। विद्वानों का मत है कि द्वितीय से षष्ठ काण्ड तक का निर्माण पूर्व में हो चुका था। प्रथम और सप्तम काण्ड बाद में जोड़े गये। द्वितीय से षष्ठ काण्ड तक भगवान राम एक महावीर के रूप में चित्रित किये गये हैं। सप्तम काण्ड में उन्हें विष्णु के अवतार के रुप में प्रदर्शित किया गया है। अतः सप्तम काण्ड संम्भवतः बाद में जोड़ा गया है। विद्वानों का मत है कि यदि सप्तम काण्ड बाद में जोड़ा गया है तो वह किसी और कवि की कृति भी हो सकती है।
रामायण का रचनाकालः भारतीय परंपरा के अनुसार रामायण की रचना त्रेता युग में हुई। इसके अनुसार रामायण का काल ईसा से सहस्त्रों वर्ष पूर्व है। यूरोपीय विद्वानों के अनुसार रामायण की रचना ईसा से लगभग 300–400 वर्ष पूर्व हो चुकी थी। जो कुछ भी बाद में जोड़ा गया, वह ईस्वी शती २०० तक सम्पूर्ण हो चुका था। कुछ यूरोपीय विद्वानों का मत है था कि रामायण यूनान के कवि होमर से प्रभावित हुई थी, किन्तु अब सभी यूरोपीय विद्वान इस बात से सहमत है कि यवन या यूनान का रामायण पर कोई प्रभाव नहीं है। इसको भी सभी विद्वान मानते है कि यह बुद्ध से पूर्व बन चुकी थी।

(क) रामायण में सांगीतिक विषयों का उल्लेख
रामायण में जिन सांगीतिक विषयों का उल्लेख आया है उससे यह पता चलता है कि उस काल में हमारे संगीत की क्या स्थिति थी। यदि हम यूरोपीय विद्वानों द्वारा निर्धारित ईसा से 300–400 वर्ष पूर्व ही रामायण का काल मान ले तो भी रामायण में जिन सांगीतिक विषयों की चर्चा हुई है, उनसे यह पता चलता है कि आज से लगभग 2300 वर्ष पूर्व हमारे संगीत ने कितनी उन्नति कर ली थी।
सर्वप्रथम यदि हम संगीत शब्द को ले तो संगीत शब्द किष्किन्धा काण्ड के २८ वें सर्ग के श्लोक ३६ और ३७ में आया है। श्री रामचन्द्र किष्किन्धा वन का वर्णन करते हुए लक्ष्मण से कहते है– हे लक्षमण! देखो भ्रमरों का गुंजार वीणा के मधुर स्वर जैसा है। मेंढक मानो अपने कंठ से ताल के 'बोल' बोल रहे हैं। मेघ का गर्जन मृदंग के नाद जैसा सुनाई दे रहा है। और भी देखो ये मयूर संगीत का कैसा दृश्य उपस्थित कर रहे हैं। इन मयूरों में से कुछ तो नाच रहे हैं, कुछ गा रहे हैं तथा कुछ वृक्षों के अग्रभाग में बैठे हुए इस नृत्य और गान का आनंद ले रहे हैं। लगता है वन में संगीत चल रहा है। रामायण काल में वाद्य, गान, और नृत्य तीनो के समूह के लिये संगीत शब्द का प्रयोग हुआ है। रामायण में गीत शब्द का प्रयोग भी अनेको बार किया गया है। इससे प्रतीत होता है कि रामायण काल तक 'संगीत' शब्द का व्यापक अर्थ में प्रयोग होने लगा था। अभिजात संगीत और संगीतशास्त्र के लिये उस समय 'गान्धर्व' शब्द का प्रयोग होता था। गीत शब्द का प्रयोग भी कई स्थानों पर किया गया है। उदाहरणार्थ – बालकाण्ड के चौथे सर्ग का २७ वाँ श्लोक इस प्रकार गीत को व्यक्त करता है–

''परं कविनामाधारं समाप्तं च यथाक्रमं,
अभिगीतमिदं गीतं सर्वगीतेषु कोविदैः।।

अर्थात– वाल्मीकि द्वारा रचा हुआ यह काव्य सब कवियों का आश्रय है। यथाक्रम इसकी समाप्ति हुई है। सर्व प्रकार के ज्ञान में निपुण कुश और लव से तुम लोगों ने इस गीत के प्रकार को सुना। बाल काण्ड के चौथे सर्ग के आठवें श्लोक में भी संगीत के बहुत से शब्द आये हैं। जो यह बतलाते हैं कि उस समय हमारा संगीत कितनी उन्नत दशा में था श्लोक इस प्रकार है–

पाठ्ये गेये च मधुरं प्रमाणोंस्त्रिभिरन्वितम्।
जातिभिः सप्तभिर्युक्तं तन्त्रीलयसमन्वितं।८।
रसैः श्रृंगारकरूणहास्यरौद्रभयानकैः
वीरादिमी रसैर्युक्तं काव्यमेतदगायताम्। पाठभेदः।

अर्थात कुश और लव के द्वारा रामायण काव्य का गायन किया गया। वह पाठ्य और गेय दोनों में मधुर था। तीनों प्रमाणों और सात जातियों से युक्त था। वीणा और लय के साथ उसका गान उन दोनो राजपुत्रों ने किया। वह काव्य श्रृंगार, करुण, हास्य, रौद्र, भयानक, वीर इत्यादि रसों से युक्त था।

बाल काण्ड के उपरोक्त श्लोक में तीसरा शब्द 'प्रमाण' आया है। यह बतलाया गया है कि तीन प्रमाण से युक्त रामायण काव्य का गायन लव–कुश द्वारा किया गया। इस संदर्भ में 'प्रमाण' का अर्थ 'लय' है। तीन प्रमाण अर्थात् दुत, मध्य, विलम्बित तीनों लयों में उन बालकों ने रामायण काव्य का गायन किया। चौथा महत्वपूर्ण शब्द उपरोक्त श्लोक में 'सप्तजाति' है। 'सप्तभिर्जातिभिर्युक्त' अर्थात् सात जातियों से युक्त रामायण का गायन लव एवं कुश द्वारा किया गया। यहाँ देखने वाली बात है कि जातियों से पहले सप्त की संख्या लगी है। सात शुद्ध जातियों थीं। आगे चलकर ११ और विकृत जातियों का विकास हुआ। रामायण में केवल सात की ही संख्या दी है। इससे प्रतीत होता है कि उस काल तक केवल शुद्ध जातियों की ही निष्पति हुई थी। शुद्ध जातियाँ वे है जो सम्पूर्ण होती है अर्थात जिनमें सातों स्वर लगते हैं। कोई स्वर कम नहीं लगाया जाता। लव और कुश द्वारा इन सप्त जातियों में रामायण का गायन किया गया।

तन्त्री का अर्थ तन्त्रीयुक्त वीणा है। लव एवं कुश रामायण को वीणा के साथ गाते थे। वीणा और गान सब एक लय में चलता था। 'प्रमाण' और 'तन्त्रीलयसमन्वित' शब्द उत्तरकाण्ड के ६४ वें सर्ग के तीसरे लोक में भी मिलता है। बालकाण्ड के चौथे सर्ग के १०वें श्लोक में कुश और लव के विषय में यह भी कहा गया है–

''तौ तु गान्धर्वतत्वज्ञौ स्थानमूच्छनकोविदौ।
भ्रातरौ स्वरसम्पन्नौ गान्धर्वाविव रूपिणी।।''

अर्थात वे बालक गान्धर्व के तत्व को जानते थे, स्थान और मूर्च्छना को जानते थे. मधुर स्वर से सम्पन्न थे और गन्धर्व के समान रुपवान थे।

कुश और लव के विषय में ''स्थानमूच्छनकोविदौ'' भी कहा गया है। वे ''स्थान'' एवं 'मूर्च्छना' के जानकार थे। स्थान शब्द मन्द्र, मध्य, एवं तार स्वरों के लिये प्रयुक्त हुआ है। कवि का तात्पर्य यही है कि दोनों बालक सरलता के साथ मन्द्र, मध्य और तार तीनों सप्तकों में अपने गायन का विस्तार करते थे तथा वे दोनों बालक मूर्च्छना तत्व को भी भली–भाँति जानते थे।

वैदिक काल में शास्त्रबद्ध संगीत को 'गान्धर्व' कहते थे। इसी संगीत के लिये आगे चलकर मार्ग–संगीत का प्रयोग हुआ। रामायण काल में मार्ग संगीत को बहुत उच्च स्थान प्राप्त था। बालकाण्ड के चौथे सर्ग का ३६ वाँ श्लोक इस प्रकार है–

'ततस्तु तौ रामवचः प्रचोदितावगायातां मार्गविधानसंपदा।
स चापि रामः परिषदग्तः शनैर्बुभूषयासक्तमना वभूव।।

बालकाण्ड के प्रारंभ में महर्षि वाल्मीकि ने सारे रामायण का सारांश भूमिका के रूप में दे दिया है। चौथे सर्ग में उन्होने यह बतलाया है कि किस प्रकार अंत में श्री रामचंद्र ने अपने पुत्रों के मुख से अपना चरित सुना। इसी संबंध में कवि ने कहा है– 'तब उन दोनों बालकों ने राम के कहने से मार्गीय संगीत के नियमानुकूल (रामचरित) का गायन किया। सभा में बैठे हुए राम अपने चरित की चिरन्तन स्थिति की इच्छा से उस गान की ओर आकृष्ट हुये।

(ख) रामायण काल में लय–ताल

साथ ही रामायण काल में स्वर और जाति का प्रयोग तो उन्नत दशा में था ही साथ ही लय और ताल का ज्ञान भी उन्नत अवस्था को प्राप्त था। ताल संबंधी बहुत से पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग रामायण में हुआ है। पूर्व में वर्णित 'प्रमाण' शब्द का प्रयोग 'लय' के अर्थ में हुआ है।

'प्रमाण' और 'मान' संगीतशास्त्र में ताल के अर्थ में भी आया है। लय शब्द बालकाण्ड के द्वितीय सर्ग के १८ वे श्लोक में यथा 'तन्त्रीलयसमन्धितः', उत्तरकाण्ड के ७१ वें सर्ग के १५ वें श्लोक में यथा 'तन्त्रीलयसमायुक्त' एवं उत्तरकाण्ड के ६४ वें सर्ग के तीसरे श्लोक में यथा श्तन्त्रीलयसमन्विताम् में प्रयुक्त हुआ है।

टीकाकारों ने 'लय' का अर्थ कहीं–कहीं मृदंग, वेणु, तन्त्री, गान का एक साथ मिल जाना और कहीं–कहीं दुत, मध्य, से विलम्बित वृत्ति से लिया है। आजकल द्रुत, मध्य, विलम्बित वृत्ति के अर्थ में ही 'लय' शब्द व्यवहरत होता है। ताल शब्द भी उसी अर्थ में प्रयुक्त हुआ है, जिसमें वह आजकल प्रयुक्त होता है। अर्थात हाथ अथवा अवनद्ध वाद्य अथवा घन वाद्य द्वारा गीत, वाद्य, नृत्य के मात्रा विभाग इत्यादि को व्यक्त करना। उत्तरकाण्ड के ७१ वे सर्ग के १५ में श्लोक में 'समतालसमन्वितम' प्रयोग हुआ है परन्तु यहाँ सम से अर्थ जिस मात्रा पर गान और ताल के प्रारंभ का एकीकरण होता है इसी अर्थ में लिया जाए अथवा नहीं? इसका उत्तर टीकाकारों ने 'गानोचिततालशब्देन' द्वारा दिया है। जिसका अर्थ उपरोक्त कथन से भिन्न नहीं है।

उत्तरकाण्ड के ६४ वें सर्गे के ७ वें श्लोक में कला और मात्रा का उल्लेख भी आया है यथा–

कलामात्राविशेषज्ञान् ज्योतिषे ची परंगतान्।
क्रियाकल्पविदिश्वीय तथा कार्यविशारदान।।

अर्थात कला और मात्रा के विशेषज्ञों को, ज्योतिष में पारंगत विद्वानों को बड़े–बड़े कर्मकाण्डियों को और आवाप, निष्काम आदि क्रियाओं के विशेषज्ञों को राम ने आमंत्रित किया। संदर्भ यह है कि भगवान राम अश्वमेध यज्ञ करने जा रहे हैं अतः सभी क्षेत्रों के पारांगत विद्वानों को बुलवाया गया है। साथ ही साथ उन्होनें गान्धर्वतत्व को जानने वाले स्वर, लय, गीत, कला और मात्रा के विशेषज्ञों को भी बुलवाया ताकि यज्ञ के अवसर पर जब लव और कुश जब रामायण का गान करें तो ये देखें कि दोनो बालको को शुद्ध संगीत का ज्ञान कहाँ तक प्राप्त है।

इसी संदर्भ में 'कला' और 'मात्रा' का उल्लेख हुआ है। प्राचीन काल में पाँच अक्षरों का उच्चारण काल 'लघु' अथवा 'मात्रा' कहलाता था। यही गुरु या मात्रा ताल की इकाई थी। दो गुरु के मिलने से एक लघु होता था।

'कला' शब्द प्राचीन संगीत में तीन अर्थो में प्रयुक्त हुआ है यथा गुरु, ताल भाग तथा निशब्द अथवा सशब्द क्रिया हेतु। ताल के संदर्भ में एक महत्वपूर्ण शब्द 'शम्या' प्रयुक्त हुआ है। इसका उल्लेख अयोध्याकाण्ड के ६१ वें सर्ग के ४६ वे श्लोक में हुआ है। प्रसंग है जब भरत भगवान राम की खोज में अपनी सेना के साथ भारद्वाज मुनि के आश्रम में मुनि ने पहुंचते है तो भारद्वाज मुनि ने किस प्रकार अपने तपोबल से पूरी सेना को अप्रतिम आतिथ्य प्रदान करते है–

बिल्या मार्दडिगका आसन् शम्याग्राहा विभीतिकाः।
अश्वत्था नर्तकाश्वासन भारद्वाजस्य तेजसा।।

प्राचीन संगीत में ताल को हाथ से प्रदर्शित करने को क्रिया कहते थे। यह दो प्रकार से होती थी–निःशब्दा (बिना आवाज के) और सशब्दा (आवाज सहित) प्रत्येक के चार उपप्रकार थे। 'शम्या' एक सशब्दा क्रिया थी।

रामायण काल में आम जन जीवन पर भी संगीत की अमिट छाप थी। संगीत का प्रभाव न केवल मानवों पर अपितु पशुओं पर भी था। हिरणों को संगीत से लुभाकर पाश्वद्ध किया जाता था। राजा–प्रजा, नर–नारी, आर्य वानर तथा राक्षस सभी वर्गों में संगीत कला का आस्वादन लिया जाता था। रामायण कालीन जन–जीवन में संगीत का व्यापक उपयोग होता था। प्रातः जगाने के लिये, अराधना के लिये, उत्सव के समय, युद्ध में वीरों को उत्साहित करने के लिये विभिन्न अवसरों पर संगीत का प्रयोग होता था।

संगीत का व्यवसाय करने वालों में गायक, सूत, बंदी, वीर तथा वीरांगनाओं का समावेश था। सामान्य जनता को प्रसन्न करने वाला इनका संगीत देशी संगीत रहा होगा इसमे कोई सन्देह नहीं। रामायण कालीन नगरों में इन कलाकारों का महत्वपूर्ण स्थान था। इन गायक वर्गों को राजसभा में वेतन या पारिश्रमिक पर नियुक्त किया जाता था। राजा कलाकारों का आश्रयदाता हुआ करते थे तथा उन्हें प्रसन्न रखना संगीतज्ञ अपना कर्तव्य समझते थे, अयोध्याकाण्ड के ६७ वें सर्ग के १५ में श्लोक में कहा गया है

नाराजके जनपदे प्रक्रप्टनटनर्तकः।
उत्सयाश्व समाजश्व वर्धन्ते राष्ट्रवर्धनाः।।

अर्थात जिस देश में राजा नहीं है वहाँ के नट–नर्तक कभी प्रसन्न नहीं रहते और राष्ट्र को उन्नत करने वाले उत्सव और समाज वहाँ बढ़ नहीं सकते। रामायण काल में राजा और प्रजा के मनोरंजन के लिये नृत्यशालाएँ और संगीतशालाएँ पर्याप्त रुप में थीं। अयोध्या के अतिरिक्त सुग्रीव की किषिकन्धा और रावण की लंका नगरी में भी इन कलाकारों का संघ विद्यमान था।
राम के वनवास के पश्चात जब भरत अयोध्या के निकट पहुंचते है तो देखते है कि जो अयोध्या नगरी सदा स्वरों से गूंजती रहती थी, वहाँ किसी वाद्य की ध्वनी नहीं आ रही। तो उनके मन में तुरन्त यह शंका उठती है कि कोई अमंगल अवश्य हुआ है। दुःस्वप्नों से व्यग्र भरत का गायन, वादन, नृत्य नाटक आदि से मनोरंजन करने का प्रयत्न किया गया था। रामचन्द्र के वनवास से लौटने पर कुशल संगीतकारों ने शंख और दुन्दुभियों से उनका स्वागत किया था।
कलागोष्ठी का आयोजन रसिक श्रोताओं के मध्य किया जाता था तथा उन्हें यथायोग्य पारितोषिक देकर सम्मानित किया जाता था। उदाहरण स्वरूप श्री राम द्वारा अश्वमेध यज्ञ किये जाने के अवसर पर लव और कुश के गायन से वे इतने अधिक प्रसन्न हुए कि उन्होंने भरत से कहा कि इन दो महात्माओं को १८००० स्वर्णमुद्राएँ प्रदान की जाए।
इस प्रकार रामायण में संगीत सम्बन्धी अनेकों उद्धरण मिलते है जिससे विदित होता है कि तत्कालीन सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन में संगीत का स्थान बहुत महत्वपूर्ण था।

(ग) रामायण में वर्णित वाद्यः

प्राचीन संगीत में सभी प्रकार के वाद्यों के लिये सामान्य संज्ञा 'अतोद्य' थी। रामायण काल में इन वाद्यों को बजाने वालों का साधारण नाम तूर्य था। रामायण काल में प्रयुक्त कुछ वाद्यों का विवरण इस प्रकार है–
रामायण काल में वैदिक काल की भाँति वीणा का प्रचुर प्रचार था। वीणा का रामायण के अयोध्याकाण्ठ के ३६ वें सर्ग के ३६ वें श्लोक में, सुंदरकाण्ड के १० वे सर्ग के ३७ वें और ४० वें श्लोक में उल्लेख हुआ है। केवल वीणा ही नहीं वीणा के एक विशेष प्रकार 'विपंची' का उल्लेख भी सुंदरकाण्ड के श्लोक में पाया जाता है। विपंची वीणा की संगति में नर्तकियाँ नृत्य किया करती थीं, ऐसा वाल्मीकि के निम्न वचन से स्पष्ट है–

विपंची परिगृहान्या नियता नृत्यशालिनी

वेणु – वेणु वाद्य वीणा के समान वैदिक काल में भी प्रचलित था। रामायण काल तक आते आते संभवतः इसकी बनावट में कुछ और प्रगति हुई हो। संभवतः रामायण काल में वेणु के नाना प्रकार अस्तित्व में आ गये थे। सुंदरकाण्ड में 'वश' शब्द भी आया है जो कि वेणु का ही पर्याय है। शंख भी एक फूंक का वाद्य है, जिसका उल्लेख युद्धकाण्ड के ४६ वे सर्ग के ३६ वें श्लोक में आया है।
दुन्दुभी – दुन्दुभीः अवनद्ध वाद्य के अनेक प्रकारों का उल्लेख रामायण में आया है। दुन्दुभी भी एक प्राचीन वाद्य है। यह वैदिक काल में भी प्रचार में था। यह संग्राम के समय उत्तेजना के लिये, जयघोष के लिये, मंगल कार्यों के समय, राजप्रसाद और मंदिरों में प्रातः एवं सायं बजाया जाता था। इसमें दो नग होते थे, एक बड़ा और एक छोटा। छोटा नग धातु का बना होता था, चमड़े से मढ़ा हुआ और चमड़े की डोरियों से कसा होता था। बड़ा नग स्थूल चमड़े से मढ़ा हुआ होता था।
युद्धकाण्ड के ४४ वें सर्ग के १२ वे श्लोक में भेरी, मृदंग और पणव तीनों एक साथ प्रयुक्त हुए है।

यथा ततो भेरीमृदंगानां पणवाना व निःस्वन ।
भेरी, मृदंगम पणव शंखनेमिस्यनोन्मिश्रः संबभूवाद्भुतोपमः।।

भेरी, मृदंग और पणव – भेरी, मृदंग और पणव वाद्यों का भी दुन्दुभि के समान रण में योद्धाओं के उत्साह वर्धन के लिये प्रचुर प्रयोग होता था। भेरी, मृदंग की ही जाति का वाद्य है यह धातु की बनी होती थी। भेरी दो मुख वाली होती थी। पणव वाद्य भी देवपूजा और युद्ध के समय बजाया जाता था। यह भी मृदंग जाति का वाद्य था।
मृदंग का रामायण में अनेकों स्थानों पर उल्लेख हुआ है। यह वाद्य अभी तक प्रचार में है एवं सभी लोग, इससे परिचित है। मुरज, मृदंग अथवा मर्दल जाति का वाद्य है। चेलिका भी एक प्रकार का अवनद्ध वाद्य था किन्तु इसका आकार इत्यादि क्या था इसका पता किसी भी संगीतग्रंथ से नहीं चलता।
कोणः युद्धकाण्ड में कोण का उल्लेख हुआ है। युद्ध के लिये रावण की आज्ञा पाकर राक्षसों ने भयानक गर्जन किया। अनन्तर चन्द्र के समान कुछ वेत और पीले रंग के मुख वाली राक्षसों की भेरियों सोने के डण्डे से आहत होकर बजने लगी। कोण का अर्थ है बजाने का डण्डा या उपकरण। इसका वीणा अथवा अवनद्ध वाद्यों के बजाने के साधन के अर्थ में प्रयोग होता था। रावण भेरी का मुख सुनहला था और उसके बजाने का डण्डा (कोण) सोने का था। ऐसा उल्लेख मिलता है।

निष्कर्ष

इस प्रकार कहा जा सकता है कि रामायण काल में संगीत एक बहुविकसित अवस्था को प्राप्त हो चुका था। इस काल में गायन, वादन, एवं नृत्य तीनों अपने उच्चत्तम शिखर पर आसीन थे तथा तीनों के लिये संगीत शब्द का प्रयोग होता था। संगीत समाज का एक अभिन्न अंग था। इस काल में संगीत का प्रचार–प्रसार उच्च वर्ग से लेकर निम्न वर्ग तक सभी में था। राजा एवं राज्य के साथ संगीत का घनिष्ठ संबंध था। राजा प्रायः गीत –संगीत से ही सोते और जागते थे। संगीतजीवी वर्ग का इस काल में काफी प्रचार हो चुका था। संगीत के शास्त्र पक्ष यथा लय, ताल, वाद्य, नृत्य, जाति तथा मूच्छर्ना आदि का वर्णन इस काल में मुक्त रुप से हुआ है।
निःसंदेह जिस युग में मर्यादापुरुषोत्तम भगवान श्री राम ने जन्म लिया यह युग बड़ा ही पावन, पवित्र एवं धर्मपरायण था। 'संगीत' धर्म एवं संस्कृति के साथ–साथ धनधान्य एवं खुशहाली का प्रतीक होता है। अतः रामायण काल में संगीत का सम्मानजनक एवं उत्चतम स्थान पर होना अपेक्षित, दृष्टिगत एवं सर्वमान्य है।

सन्दर्भ सूची

1. परांजपे, श्रीधर शरचंद्र, भारतीय संगीत का इतिहास, चौखम्बा वाराणसी
2. परांजपे, श्रीधर शरचन्द्र, संगीत बोध, मध्य प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
3. देवांगन तुलसीराम, भारतीय संगीत शास्त्र, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
4. गर्ग, लक्ष्मी नारायण, निबंध संगीत, संगीत कार्यालय, हाथरस
5. सिंह, ठाकुर जयदेव, भारतीय संगीत का इतिहास, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
6. जोशी उमेश, भारतीय संगीत का इतिहास, मानसरोवर प्रकाशन प्रतिष्ठान, आगरा
7. सेन, अरुण कुमार, भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन, मध्य प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
8. शर्मा, भगवतशरण, भारतीय संगीत का इतिहास, संगीत कार्यालय, हाथरस